Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 1 | ISSN : 2581- 6306

श्रीमद्भगवद् गीता में शैक्षिक विचार

डॉ. कैलाश चन्द मीणा
सहायक प्रोफेसर, शिक्षा शास्त्र विभाग,
श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय,
केन्द्रीय विश्वविद्यालय नई दिल्ली, भारत।

Article Info
Volume 4, Issue 1
Page Number : 139-149

Publication Issue :
January-February-2021

Article History
Accepted : 16 Jan 2021
Published : 30 Jan 2021

सारांश — श्रीमदभगवद गीता में श्री कृष्ण ने अर्जुन को जीवन जीने की सीख दी उन्होंने बताया कि व्यक्ति को मोह ममता का त्याग कर सही और गलत का निर्णय स्वयं करना चाहिए । भगवान श्री कृष्ण ने कहा कि जीना और मरना जन्म लेना और बढना विषयों का आना जाना सुख दुख का अनुभव ये ता संसार में होते ही हैं इनसे विचलित नहीं होना चाहिए एवं अपने कर्मपथ पर अविरल चलते रहना चाहिए । गीता में सामाजिक, चारित्रिक, सांवेगिक, शारीरिक, आध्यात्मिक, शिक्षा के साथ—साथ मनुष्य को साहसी, कर्मठी, स्वविवेकी, जिज्ञासु, श्रध्दावान, निर्भयी, वफादार, जिम्मेदार, चिन्तामुक्त, पर्यावरण व प्रकृति प्रेमी, कल्याणकारी, एकाग्रचित्तयुक्त, वैरभाव रहित, रागद्वेष रहित, स्वकर्म में तत्परी, व्यावहारिक ज्ञान में कुशल, स्वस्थ तथा ज्ञानी होने की भी शिक्षा दी गई ।

मुख्यशब्द — श्रीमदभगवद गीता, शैक्षिक, अर्जुन, जीवन सामाजिक, चारित्रिक, सांवेगिक, शारीरिक, आध्यात्मिक, साहसी, कर्मठी, स्वविवेकी, जिज्ञासु, श्रध्दावान, निर्भयी, वफादार, जिम्मेदार, चिन्तामुक्त।

गीता वेदों और उपनिषदों का सार माना जाता है । गीता सत्य और आध्यात्म का मार्ग दिखाकर मोक्ष की प्राप्ति करवाती है । गीता अपने अंदर भगवान श्री कृष्ण के उपदेश को समेटे हुए है। गीता में तीन योगों के बारे में बताया गया है — कर्म योग, भक्ति योग, और ज्ञान योग । गीता हमें जीवन मे शत्रुओं से लडना सिखाती है ईश्वर से एक गहरा नाता जोडने में भी मदद करती है । गीता त्याग प्रेम और कर्त्तव्य का संदेश देती है। गीता में कर्म को बहुत अधिक महत्व दिया गया है । गीता एक पुस्तक ही नहीं अपितु यह तो जीवन मृत्यु के दुर्लभ सत्य को अपने में समेटे हुए है। कृष्ण ने सच्चे मित्र और गुरू की तरह अर्जुन का न सिर्फ मार्गदर्शन किया बल्कि गीता का महान उपदेश भी दिया।उन्होने बताया कि इस संसार में हर मनुष्य के जन्म का कोई ना कोई उद्देश्य होता है, मृत्यु पर शोक करना व्यर्थ है, यह तो अटल सत्य है जो जन्म लेगा उसकी मृत्यु निश्चित है जिस प्रकार हम पुराने वस्त्रों को त्याग कर नवीन वस्त्रों को धारण करते हैं उसी प्रकार आत्मा पुराने शरीर के नष्ट होने पर नए शरीर को धारण करती है—

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृहणाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयति नवानि देही ।। —१

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

गीता में सामाजिक शिक्षा—

श्री कृष्ण ने उपदेश दिया कि समाज में व्याप्त दोषों को तथा दुष्टों को समाप्त करने तथा समाज में सामाजिक मूल्यों की संस्थापना हेतु अर्थात सज्जनों की रक्षा करने व दुष्टों के विनाश हेतु तथा धर्म की संस्थापना हेतु शिक्षा की आवश्यकता होती है ऐसा शिक्षा उपदेश सभी युगों में होगा ऐसा श्रीमद् भगवत गीता में कहा गया है ।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम ।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ।। —२

चारित्रिक विकास की शिक्षा—

श्रेष्ठ पुरूष जो—जो आचरण करते हैं इतर जन वैसा—वैसा आचरण करते हैं, गीता में चारित्रिक विकास की शिक्षा के लिए इंद्रिय संयम की आवश्यकता प्रतिपादित की है —

यद्यदाचरित श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जन: ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ।। —३
तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ ।
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ।। —४

गीता में सांवेगिक विकास की शिक्षा—

अंग्रेजी का इमोशन शब्द लैटिन के इमोवर शब्द से निकला है जिसका अर्थ है— हटो, हटाओ, उत्तेजित करना । संवेग चेतना की मजबूत भावनात्मक और स्नेहपूर्ण स्थिति होती है। मैक्डॉगल के अनुसार ''संवेग सहजवृत्ति का मूल है।''

गीता में सांवेगिक विकास की शिक्षा के बारे में बताया गया है कि — इंद्रिय विषयों से संम्बन्धित चिंतन और उसकी संन्तुष्टि व्यक्ति में आसक्ति उत्पन्न करती है, आसक्ति काम नामक संवेग को उन्पन्न करती है जो क्रोध को जन्म देती है यथा—

ध्यायतो विषयान्पुंस: सङ्गत्स्तेषूपजायते ।
सङ्गासञ्जायते काम: कामात्क्रोधोऽभिजायते ।। —५

आगे भी कहा गया है कि क्रोध से सम्पूर्ण मोह का जन्म होता है, मोह स्मृति को भ्रमित कर देता है जो बौद्धिक क्षमता को नष्ट कर देती है । और अन्तत: व्यक्ति भव कूप सांसारिक दुनिया में फिर से गिर जाता है —

क्रोधातृ भवति सम्मोह: सम्मोहात्स्मृतिविभ्रम: ।
स्मृति भ्रंशाद बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति ।। —६

गीता हमें संवेगों पर नियत्रंण करना सिखाती है। इस चक्रिय परिक्रमा में संवेग महत्वपूर्ण होते हैं । यदि वे संतुलित और अच्छी तरह से प्रबंधित किए जाए तो वे मुक्ति पाने में सकारात्मक भूमिका निभातें हैं और इसके विपरीत वे मुक्ति में बाधक साबित हों सकते हैं।

शारीरिक विकास की शिक्षा—

गीता में कृष्ण और अर्जुन से जुडा एक श्लोक है—

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्नाव बोधस्य योगो भवति दु:खहा ।। —७

कालान्तर में इसमें से युक्ताविहारस्य पद्यति को आयुर्वेद में अपनाया गया है यानि युक्त आहार विहार से शरीर के सभी प्रकार के रोग दूर हो सकते हैं फिर चाहे वे मानसिक हों या शारीरिक ।

आयु:सत्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धना: ।
रस्या: स्निग्धा: स्थिरा हृद्या आहारा: सात्विकप्रिया: ।। —८

अर्थात आयु, बुद्धि, बल, स्वास्थ्य, सुख, प्रसन्नता बढाने वाले आहार सात्विक व्यक्ति को प्रिय होतें हैं। उपर्युक्त श्लोकों के द्वारा वेदव्यास ने गीता में स्वास्थ्य विषय के ऊपर भी सार्थक चिन्तन किया। शारीरिक स्वास्थ्य की रक्षा के लिए मानसिक स्वास्थ्य की प्रगति प्राप्त होती है, क्योंकि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क निवास करता है अत: शारीरिक स्वास्थ्य की संरक्षा के लिए गीता में योग, ध्यान, निद्रा, तप, आहार, विहार आदि के ठीक लक्षण प्रकृति और लाभ हानि का प्रतिपादन किया गया है क्योंकि कहा गया है — सभी कर्त्तव्यों का साधन शरीर होता है—

शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम् । —९

आध्यात्मिक विकास की शिक्षा—

वैसे तो सम्पूर्ण गीता ग्रंथ आध्यात्मिक विकास के उद्देश्यों को बखान करती है फिर भी विशिष्ट रूप से सांख्य योग के द्वितीय अध्याय में आध्यात्मिक उद्देश्य को सम्यक प्रकार से वर्णन किया गया है आत्मा परमात्मा के विषय में श्री कृष्ण ने अर्जुन को कहा कि — आत्म तत्व का सर्वष्य अवध्य कारण से शोक का परिहार होता है—

देहीनित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत ।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ।। —१०

अर्थात हे भरतवशोंद्भव अर्जुन सबके देह में यह देही नित्य ही अवध्य है। इसलिए सम्पूर्ण प्राणियों के लिए अर्थात किसी भी प्राणी के लिए तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।

अत: गीता कहती है कि मनुष्य की आध्यात्मिक खोज और समाज के प्रति उसके कर्त्तव्य में कोई विरोध नहीं है । आध्यात्मिक साधना में भी सफलता उसी को मिलती है जो अपने सामाजिक उत्तरदायित्व का पालन करता है। गीता अर्जुन और श्री कृष्ण के बीच संवाद है जो क्रमश: व्यक्तिगत चेतना और विश्व चैतन्य के प्रतीक हैं। ये दोनों ही हमारे अंदर हमारी व्यक्तिगत चेतना और विश्व चैतन्य के रूप में विद्यमान है। अर्जुन द्वारा उठाए गए प्रश्न हमारे मन में हर रोज उठतें हैं। उनका उत्तर हमें अपने हृदय के उस मौन गहराई में मिलेगा जहॉ श्री कृष्ण परमात्मा पूर्ण शब्दातीत नीरवता की भाषा में हमसे संवाद करने के

लिए सदा विद्यमान है। रामचरितमानस में भी कहा गया है कि — ईष्वर अंस जीव अबिनासी, चेतन अमल सहज सुख राशि ।
अन्य उक्तियॉ भी हैं— आत्मा को परमात्मा , नर सेवा ही नारायण सेवा ।

गीता की अन्य शिक्षाऍं—

वर्तमान समय में हर क्षेत्र में गीता की निम्नलिखित शिक्षाऍं हमारे जीवन मे बहुत उपयोगी साबित सिद्ध हो रहीं हैं जिनका अनुसरण करके हम वास्तविक जीवन जीने की कला गीता की शिक्षाओं से सीख सकेंगें और भावी जीवन को सफल व समर्थ बना सकेंगें—

१.कर्मठ होना:—

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ।। —११

अर्थात कर्म करके फल की इच्छा छोड दे । अत: कर्मठता से कार्य करना चाहिए । रामचरितमानस में भी कहा गया है कि — करम प्रधान विष्व करि राखा, जो जस करइ सो तस फलु चाखा ।

"work is worship"

२.साहसी होना—

क्लैब्यं मा स्म गम: पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते ।
क्षुद्रं हृदयदौर्यबल्यं व्यक्त्वोतिष्ठ परन्तप: ।। —१२

अर्थात कायरता, कायरता है चाहे वह करूणा जनित हो या भय जनित । अत: अपने स्वत्व और अधिकारों की रक्षा के लिए हमेशा तैयार रहना चाहिए । अन्याय का सदा प्रतिकार करना चाहिए ।

३.स्वविवेक से निर्णय लेना:—

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्यादगुहयतरं मया ।
विमृश्यैतदशैषेण यथेच्छसि तथा कुरु ।। — १३

अर्थात सलाह और विचार विमर्श तथा मार्गदर्शन भले ही सब से लेते रहें लेकिन निर्णय स्वयं की बुद्धि से लेना चाहिए । श्री कृष्ण ने भी अर्जुन को स्व विवेक निर्णय हेतु पूर्ण स्वतंत्रता दी थी । स्वाबलम्बी एवं आत्म निर्भर बनने की शिक्षा गीता में दी गई है। जैसा कहा भी गया है कि —सुनो सबकी, करो मन की ।

४. ज्ञान पिपासु और जिज्ञासु होना :—

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन: ।। —१४

अर्थात केवल सूचनाओं को पढकर ज्ञानी नहीं बना जा सकता इसके लिए विशेषज्ञों के पास तथा विद्या पारंगतों के पास विनम्रता और श्रद्धापूर्वक हमें जाना चाहिए तभी सही लक्ष्य और वास्तविक शिखर स्पष्ट दिखाई देने लगेगा ।

५. मधुर और हितकारी वाणी :—

अनुद्वेगकरं सत्यं वाक्यं प्रियहितं च यत् ।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वांङगमयं तप उच्यते ।। —१५

अर्थात तप तीन तरह के होते हैं— शरीर, वाणी और मन । तीनों का उपयोग लोकहित में करना चाहिए । वाणी मनुष्य की सबसे अच्छी मित्र है । इससे व्यक्ति सारे संसार को अपना मित्र बना सकता है या शत्रु बना

सकता है अत: बोली की महत्ता शब्दों का प्रभाव व वाणी को नियंत्रित और मर्यादित रखें । कहा भी गया है कि—

वाणी एक अमोल है जो कोई जाणे बोल ।
हिय तराजू तोल के, तब मुख बाहर बोल ।।

६. चारित्रिक बल से आदर्श नेतृत्व:—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जन:।
स यत्प्रमाण कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ।। — १६

अर्थात कोई भी राष्ट्र केवल वैज्ञानिक आर्थिक एवं तकनीकी प्रगति से उन्नत नहीं हो सकता , जब तक कि वह आध्यात्मिक रूप से सबल नहीं हो उसकी प्रगति अधूरी है। अत: चरित्रवान बनकर आदर्श नेत्तृत्व प्रदान करना होगा क्योंकि जो श्रेष्ठ पुरूष आचरण करते हैं लोग उनका भी अनुसरण करते हैं । अपने आचरण से ऐसे मूल्य स्थापित करने चाहिए जिनसे अन्य लोग प्रेरणा ले सकें ।

Character is lost everything is lost.

७. श्रद्धावान :—

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानम् — १७

अर्थात ज्ञान के प्रति श्रद्धा होगी तभी ज्ञान प्राप्त होगा । ऐसा कहा भी गया है—
जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरति पाएं तिन तैसी । सकारात्मक व श्रद्धा का भाव हमारे अन्दर होना चाहिए ।

८. व्यावहारिक ज्ञान में कुशल :—

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् । — १८

अर्थात मनुष्य को व्यवहार करते समय बहुत सावधान रहना चाहिए क्योंकि जैसा व्यवहार करोगे वैसा ही तुम्हारे साथ भी होगा। क्योंकि शिक्षा व्यवहार करना ही सिखाती है। क्योकि शास्त्रों में भी कहा गया है— आहार व्यवहारे त्यक्त् लज्जा ।

९. कर्म व लोक कल्याण में समन्वय :—

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च । —१९

यदि जीवन में सफलता चाहते हैं तो कर्म और लोककल्याण में समन्वय जरूरी है तभी जीवन का समग्र विकास हो पाएगा दोनों में से यदि कोई एक ही कार्य कर रहें या तो लोककल्याण या कर्म , तो दोनों ही स्थितियॉ कभी आदर्श नहीं मानी जाती । इसलिए इनमें सामंजस्य होना जरूरी है।

१०. स्वस्थ तन स्वस्थ मन :—

युक्ताहार विहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।

युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दु:खहा ।। —२०

अर्थात मन के साथ तन भी स्वस्थ रहना चाहिए जिससे जीवन में प्रगति हो सके । शरीर साधना बेहद जरूरी है , स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन मस्तिष्क बिराजते हैं।

११. ज्ञान से शांति :—

ज्ञानं लब्धवा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति । —२१

अर्थात शांति साधनों से नहीं ज्ञान से प्राप्त होती है । क्योंकि शास्त्रों में भी कहा गया है कि—

ज्ञानं मनुजस्य तृतीय नेत्रम् ।
न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।

१२. निर्भय होना:—

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम् ।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चय ।। —२२

अर्थात निर्भीक होकर कर्म करने से असफलता भी कीर्ति यश और मान दिलाती है। भयग्रस्त मन मस्तिष्क से किए गए काम में सफलता मिल भी जाए तो वह सम्मानीय वंदनीय नहीं हो सकती।

१३. व्यक्तित्व का विकास —

दु:खेष्वनुद्विग्नमना: सुखेषु विगतस्पृह: ।
वीतरागभयक्रोध: स्थितधीर्मुनिरुच्यते ।। —२३

अर्थात आदर्श व्यक्तित्व वाला व्यक्ति विपरीत परिस्थितियों में विचलित नहीं होता । राग, भय, क्रोध जब समाप्त हो जाते हैं तो व्यक्ति स्थिर बुद्धि वाला हो जाता है। तथा वह संकट और संतापों से प्रतिकूलता और अनुकूलता में सन्तुलन बनाए रखेगा ।

१४. वफादारी से कार्य करना:—

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जना: पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।। — २४

अर्थात जो व्यक्ति अपने स्वामी की कृपा का चिंतन करते हुए पूरी ईमानदारी व निष्ठा से काम करता है उसे स्वामी का पूर्ण संरक्षण मिलता है और स्वामी सदैव उसकी सुख सुविधा का ध्यान रखता है ।

Honesty is the best policy.

१५. स्वयं के प्रति उत्तरदायी :—

उद्धरेदात्मनाऽऽत्मानं नात्मानमवसादयेत् ।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मन: ।। —२५

अर्थात मनुष्य अपने उत्कर्ष एवं अपकर्ष के लिए स्वयं उत्तरदायी होता है । दूसरे का अहित किए बिना स्वयं का उद्धार अपने प्रयत्न और बुद्धि बल से करना चाहिए क्योंकि मनुष्य आप ही अपना मित्र और आप ही अपना शत्रु बनता है।

१६. कठोर व प्रभावी नीति से प्रतिद्वंदता का सामना—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत
अभ्युत्थानधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे ।। —२६

अर्थात दो प्रकार के मनुष्य होते हैं —सज्जन और दुर्जन । जब तक सज्जन जागरुक और सक्रिय होतें हैं तब दुष्ट अपनी दुष्ट प्रवृतियों से समाज को त्रस्त नहीं कर पाता । लेकिन सज्जनों की थोडी सी निष्क्रियता और उदासीनता दुष्टों का प्रभाव बढाने लगती है फिर सज्जन बचाव का मार्ग अपनाने लगते हैं और हताश और

निराश होकर सद्कार्यों को छोड देते हैं । दुष्टों पर नियंत्रण रखने और अपना कार्य जारी रखने के लिए कठोर और प्रभावी नीति अपनानी चाहिए ।

१७. स्वकर्म को प्राथमिकता —

स्वे स्वे कर्मण्यभिरत: संसिद्धिं लभते नर: । —२७

अर्थात अपने कर्म में प्रवीणता हासिल करके उसी में अपनी पहचान बनानी चाहिए दूसरे के कर्मों को अपने कर्मों से श्रेष्ठ होने पर भी नहीं अपनाना चाहिए । अत: स्वकर्म करते हुए ही सिद्धि प्राप्त की जा सकती है।

१८. राग द्वेष रहित जीवन —

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्र: करुण एव च ।— २८

अर्थात व्यक्ति को सभी प्राणियों से रागद्वेष रहित पूर्वक व्यवहार करना चाहिए । रामचरिमानस में भी कहा गया है कि —

तुलसी इस संसार में, भॉति भॉति के लोग ।
सबसे हिल मिल चालिए, नदी नाव संजोग ।।

१९. तनाव रहित रहें —

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।
गतासूनगतासूश्चं नानुशोचन्ति पण्डिता: ।। —२९

अर्थात मनुष्य को आगत विगत की चिन्ता से मुक्त होकर कर्मपथ पर आगे बढते जाना चाहिए क्योंकि घटनाएँ प्रकृति घटनाक्रम की कडी है । और वे समयानुसार घटती रहती है अनावश्यक चिन्ताओं में उलझना जीवन के अमूल्य समय को नष्ट करना है इसलिए तनाव रहित होकर अपना कर्म करते रहना चाहिए ।

चिन्ता से चतुराई घटे , घटे रूप और ज्ञान ।
चिन्ता तनिक न कीजिए, चिंता चिता समान ।।

२०. बैर—भाव रहित होकर रहो—

निर्वैर: सर्वभूतेषु य: स मामेति पाण्डव । — ३०

अर्थात मनुष्य को सभी के साथ वैर भाव भुलाकर रहना चाहिए किसी के साथ लडाई झगडा नहीं करना चाहिए । सभी प्राणियों के साथ दया का भाव रखना चाहिए कहा भी गया है कि —

दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान ।।

२१. संचयीवृत्ति का त्याग करें—

यज्ञशिष्टाशिन: सन्तो मुच्यते सर्वकिल्बिषै: ।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये ।
पचन्त्यात्मकारणात् ।। — ३१

अर्थात अरस्तु ने कहा है मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, जीवन में परोपकार और समाजकल्याण का व्रत भी लेना चाहिए क्योंकि मनुष्य जो भी अर्जित करता है उसमें समाज का योगदान होता है । इसलिए समाज का भी उस पर अधिकार है इसलिए उसका कुछ अंश समाज सेवा में भी लगाया जाना चाहिए । यह एक आदर्श समाजवाद का उदाहरण प्रस्तुत करता है। कहा भी गया है—

अन्नदानं परंदानम् ।
कर भला तो हो भला ।
नेकी कर दरिया में डाल ।

२२. प्रकृति और पर्यावरण की रक्षा करें —

देवान्भावयतामेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः प्रेयः परमवाप्स्यथ ।। —३२

अर्थात क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर, वनस्पति आदि जीवन के आधार स्तंभ हैं। इनके बिना जीवन संभव नहीं हो सकता तथा इन्हें हमारी संस्कृति में देवता तुल्य माना गया है । सृष्टि में समानता बनाए रखने के लिए जीवन जगत एवं प्रकृति में साम्य जरूरी है । इसलिए प्रकृति का सम्मान करें एवं पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त करो । क्योंकि हमारे शास्त्रों में कहा भी गया है—

दशकूपसमावापी, दशवापीसमोह्रदः ।
दशह्रदसमोपुत्रो , दशपुत्रो समो द्रुमः ।। —३३

अर्थात दश कुओं के बराबर एक बावडी, दश बावडी के बराबर एक सरोवर ,दश सरोवरों के बराबर एक पुत्र, और दश पुत्रों के बराबर एक वृक्ष का महत्त्व होता है । क्योंकि एक पेड की कीमत क्या होती है । निम्नलिखित देखें—

- ✓ एक सामान्य पेड साल भर में करीब २० किलो धूल सोखता है।
- ✓ हर साल करीब ७००किलो ग्राम ऑक्सीजन का उत्सर्जन करता है।
- ✓ प्रति वर्ष २० टन कार्बनडाईऑक्साइड सोखता है।
- ✓ हर साल करीब ०१ लाख वर्ग मीटर दूषित हवा फिल्टर करता है।
- ✓ ८० किलोग्राम पारा, लीथीयम, लेड आदि जैसी जहरीली धातुओं के मिश्रण को सोखने की क्षमता रखता है।
- ✓ गर्मियों में बडे पेड के नीचे औसतन चार डिग्री तक तापमान कम रहता है।
- ✓ घर के करीब एक पेड अकास्टिक बॉल की तरह काम करता है यानी शोर ध्वनि को सोख लेता है ।

३. सभी प्राणियों का कल्याण करें —

सर्वभूतहितेरताः । — ३४

अर्थात मनुष्य को सभी प्राणियों के कल्याण के लिए कार्य करना चाहिए । रामचरितमानस में भी कहा गया है कि —

परहित सरिस धर्मनहीं भाई,
परपीडा सम नहीं अधमाई ।।

२४. एकाग्रचित्त होकर कार्य करें—

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ।। —३५

अर्थात किसी भी संकल्प को पूरा करने के लिए मन का स्थिर व अचल होना आवश्यक है । उद्देश्य प्राप्ति के लिए हमें निरन्तर प्रयासरत रहना चाहिए । मन को बार बार अन्य बिंदुओं से हटाकर अपने लक्ष्य पर केन्द्रित करने की प्रकिया को दोहराते रहना चाहिए । इस प्रक्रिया का चमत्कारिक प्रभाव देखने को मिलता है और कार्य तल्लीनता से सम्पन्न होता है , इसलिए लक्ष्य के प्रति रूचि जागरूक करना चाहिए ।

२५. ज्ञान की पवित्रता का आदर करें —

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते । —३६

अर्थात इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला दूसरा कोई साधन नहीं है ।

ज्ञानं लब्धवा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति । — ३७

अर्थात शांति साधनों से नहीं मिलती है अपितु ज्ञान से मिलती है क्योंकि शास्त्रों मे कहा गया है कि

सा विद्या या विमुक्तये । —३८

There is no purifier in this world like knowledge .

✓ **श्रीमदभगवद गीता की आधुनिक जीवन में शिक्षा की उपादेयता:—**

श्रीमदभगवद गीता

१. कर्त्तव्य बोध कराती है।
२. सफलता शांति और संतोष का अनुभव कराती है ।
२. संकल्प और आत्मविश्वास को जगाती है ।
४. सुख दुखों मे समस्थिति सिखाती है ।
५. परिस्थितियों से सामना करना सिखाती है ।
६. सन्तुलित भोजन की उत्कृष्टता सिखाती है ।
७. एकान्त मे अभ्यास की बात सिखाती है ।
८. त्रिगुणों के साथ तात्विक ज्ञान प्रदान करती है ।
९. उचित समय पर उचित कार्य का प्रस्ताव रखती है ।
१०. यज्ञ जप तप एवं दान का मर्मत्व सिखाती है ।
११. श्रेष्ठ पुरूषों के लक्षणों को सिखाती है ।
१२. कर्म अकर्म की स्थिति की विवेचना करती है ।
१३. निष्काम कर्म कर्म की श्रेष्ठता प्रतिपादित करती है ।
१४. मोक्ष प्राप्ति के मार्गों का उल्लेख करती है ।
१५. सात्विक श्रेष्ठ व शास्त्रोक्त आचरण का प्रतिपादन करती है ।
१६. जीव—जीवात्मा के सम्बन्ध को उजागर करती है ।
१७. उत्तम शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य के लिए योग सिखाती है ।
१८. ज्ञान योग, कर्म योग एवं भक्ति योग का निरूपण करती है ।
१९. मानसिक विकारों से मुक्ति या आंतरिक स्वतंत्रता की उद्घोषणा करती है ।

<u>निष्कर्ष</u> :—

श्रीमदभगवद गीता में श्री कृष्ण ने अर्जुन को जीवन जीने की सीख दी उन्होंने बताया कि व्यक्ति को मोह ममता का त्याग कर सही और गलत का निर्णय स्वयं करना चाहिए । भगवान श्री कृष्ण ने कहा कि जीना और मरना जन्म लेना और बढना विषयों का आना जाना सुख दुख का अनुभव ये ता संसार में होते ही हैं इनसे विचलित नहीं होना चाहिए एवं अपने कर्मपथ पर अविरल चलते रहना चाहिए ।

गीता में सामाजिक, चारित्रिक, सांवेगिक, शारीरिक, आध्यात्मिक, शिक्षा के साथ—साथ मनुष्य को साहसी, कर्मठी, स्वविवेकी, जिज्ञासु, श्रध्दावान, निर्भयी, वफादार, जिम्मेदार, चिन्तामुक्त, पर्यावरण व प्रकृति प्रेमी, कल्याणकारी, एकाग्रचित्तयुक्त, वैरभाव रहित, रागद्वेष रहित, स्वकर्म

में तत्परी, व्यावहारिक ज्ञान में कुशल, स्वस्थ तथा ज्ञानी होने की भी शिक्षा दी गई । इसलिए गीता को शास्त्र की संज्ञा देते हुए इसके बारे में कहा गया है कि —

गीता सुगीता कर्त्तव्या किमन्यैः शास्त्रः शास्त्रविस्तरैः ।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिः सृता ।। — ३९

अर्थात गीता भली प्रकार मनन करके हृदय में धारण करने योग्य है जो पद्मनाभ भगवान श्री कृष्ण के श्री मुख से निःसृत वाणी है फिर अन्य शास्त्रों के संग्रह की क्या आवश्यकता ?

सन्दर्भ / पादटिप्पणी —

१ श्रीमदभगवद गीता २.२२
२ श्रीमदभगवद गीता ४.६
३ श्रीमदभगवद गीता ३.२१
४ श्रीमदभगवद गीता ३.४१
५ श्रीमदभगवद गीता २.६२
६ श्रीमदभगवद गीता २.६३
७ श्रीमदभगवद गीता ६.१७
८ श्रीमदभगवद गीता १७.८
९ कुमार सम्भव ५.३३
१० श्रीमदभगवद गीता २.३०
११ श्रीमदभगवद गीता २.४७
१२ श्रीमदभगवद गीता २.३
१३ श्रीमदभगवद गीता १८.६३
१४ श्रीमदभगवद गीता ४.३४
१५ श्रीमदभगवद गीता १७.१५
१६ श्रीमदभगवद गीता ३.२१
१७ श्रीमदभगवद गीता ४.३९
१८ श्रीमदभगवद गीता ४.११
१९ श्रीमदभगवद गीता ८.७
२० श्रीमदभगवद गीता ६.१७
२१ श्रीमदभगवद गीता ४.३९
२२ श्रीमदभगवद गीता २.३७
२३ श्रीमदभगवद गीता २.५६
२४ श्रीमदभगवद गीता ९.२२
२५ श्रीमदभगवद गीता ६.५
२६ श्रीमदभगवद गीता ४.७८
२७ श्रीमदभगवद गीता १८.४५
२८ श्रीमदभगवद गीता १२.१३
२९ श्रीमदभगवद गीता २.११

३० श्रीमदभगवद गीता ११.५५
३१ श्रीमदभगवद गीता ३.१३
३२ श्रीमदभगवद गीता ३.११
३३ मत्यपुराण
३४ श्रीमदभगवद गीता ५.२५
३५ श्रीमदभगवद गीता ६.३५
३६ श्रीमदभगवद गीता ४.३८
३७ श्रीमदभगवद गीता ४.३९
३८ विष्णुपुराण
३९ म भा भीष्मपर्व अ०४३/१